ISSN: 0973-0583

सांस्कृतिक राष्ट्रवाद का उद्घोषक संस्कृत एवं बौद्ध-संस्कृत साहित्य (नालन्दा के विशेष परिप्रेक्ष्य में)

प्रो० रूबी कुमारी

आचार्य सह अध्यक्ष, संस्कृत विभाग, नव नालन्दा महाविहार, नालन्दा

शोधसार

'संस्कृति' शब्द सम् उपसर्गपूर्वक **'डुकृञ् कृ करणे'**[1] धातु से क्तिन् प्रत्यय से निष्पन्न है। पाणिनीय अष्टाध्यायी के सूत्र **सम्परिभ्यां करोतौ भूषणे**[2] से भूषण अर्थ में सम् उपसर्गपूर्वक कृ धातु से सुट् (स्) आगम होकर 'संस्कृति' शब्द का निर्माण होता है। अतः संस्कृति का व्युत्पत्तिपरक अर्थ ही है परिष्करण या परिमार्जन की क्रिया। संस्कृति शब्द का सम्बन्ध संस्कार से है, जिसका अर्थ है संशोधित करना, उत्तम बनाना, परिष्कार करना। प्रगतिशील प्राणी होने के कारण मनुष्य अपनी मेधा के प्रयोग से अपनी जीवन-पद्धति, रीति-रिवाज, रहन-सहन, आचार-विचार, अनुसंन्धान एवं आविष्कार में निरन्तर परिष्कार कर उसे समुन्नत बनाता रहता है। भौतिक उन्नति के साथ-साथ वह अपना मानसिक, आध्यात्मिक आदि चतुर्दिक उन्नति को उत्तरोत्तर समृद्ध बनाता जाता है। हमारी प्रवृत्तियाँ, विश्वास, विचार, मूल्य, आध्यात्मिकता, धर्म-दर्शन, समग्र ज्ञान, कला, राजनीतिक-धार्मिक-आर्थिक जीवन आदि अनेक तत्त्व समग्र रूपेण संस्कृति में सम्मिलित हैं। हम कह सकते हैं कि संस्कृति जीवन की वह विधि है, जिसमें अन्तरात्मा की सूक्ष्मकला का सम्पूर्ण विकास होता है। विश्व की प्राचीनतम समुन्नत संस्कृतियों में अग्रगण्य भारतीय संस्कृति की सुदीर्घ परम्परा मन्त्रद्रष्टा ऋषियों, तत्त्ववेत्ता मुनियों के स्वानुभूत शाश्वत सत्यों से संचित निधि है।

शब्द कुँजीः प्रवृत्तियाँ, आध्यात्मिकता, चिन्तन, राष्ट्रवाद, आध्यात्मिक,धर्मचक्रप्रवर्तन, संस्कृति

राष्ट्र शब्द राज् धातु से दीप्ति अथवा शासन अर्थ में ष्ट्रन् प्रत्यय के योग से निष्पन्न होता है।[3] लोगों के मन में राष्ट्र की सभ्यता, संस्कृति, धर्म इत्यादि के प्रति जो गारिमा, महिमा एवं राष्ट्रीय चेतना सम्बन्धित नैसर्गिक स्वाभिमान हुआ करता है तथा जब लोग स्वार्थ की संकीर्ण सीमाओं का परित्याग कर अपने राष्ट्रीय सम्मान की रक्षा हेतु एक अभेद्य एकता को आत्मसात कर लेते हैं एवं राष्ट्र के लिए आत्मोत्सर्ग के इस त्यागपूर्ण वातावरण की सर्जना के पीछे जिस प्रबल भावना की प्रेरणा हुआ करती है वही राष्ट्रीय भावना राष्ट्रवाद कहलाता है। यह ऐसी उदात्त भावना है, जिसके वशीभूत लोग व्यक्तिगत हितों को अपने राष्ट्र के हित, प्रतिष्ठा में न्योछावर कर देते हैं। ऐसी ही राष्ट्रवादी भावना से प्रेरित होकर स्वतन्त्रता आन्दोलन में हमारे वीर भगत सिंह, चन्द्रशेखर आजाद, सुभाषचन्द्र बोस, बालगंगाधर तिलक, महात्मा गाँधी आदि ने अपने जीवन, परिवार, सुख-सम्पति, ऐश्वर्य आदि की आहूति दी थी।

वर्त्तमान अवधारणा है कि भारतीयों में राष्ट्रीयता अथवा राष्ट्रवाद की भावना ब्रिटिश शासन की देन है। ब्रिटिश साम्राज्य के पूर्व यहाँ की जनता में राष्ट्रवाद की भावना नहीं थी। ऐसी गलत अवधारणा प्राचीन भारतवर्ष की गौरवगाथा को धूमिल करने के उद्देश्य से प्रचारित की गयी है। भारतीय परम्परा में अपौरुषेय वेद को समस्त परा एवं अपरा विद्या का अजस्र स्रोत माना गया है- **वेदोऽखिलो धर्ममूलम्**[4]-यह प्रशस्ति इसी भावना का परिपोषक है। भारतीय राष्ट्रवाद का मूल, भारतीय ज्ञान-धरोहर का मूल वेद एवं वैदिक वाङ्मय में हमें सहज ही दृष्टिगत होते हैं, जहाँ व्यक्ति से व्यक्ति को जोड़कर परम प्राप्तव्य मोक्षोन्मुख करने का चिन्तन व्याप्त है। वैदिक साहित्य के अवगाहन से हमें ज्ञात होता है कि हमारे पूर्वज तत्त्वद्रष्टा ऋषि राष्ट्र और राष्ट्रीयता को कितना महत्त्व देते थे। ऋग्वेद की ऋचाओं में सम्पूर्ण विश्व ही राष्ट्र के रूप में दर्शाया गया है। **''वसुधैव कुटुम्बकम्''** की उदात्त भावना से अनुप्राणित

वेदों में भौगोलिक अथवा राजनीतिक सीमा-भेद से विभक्त किसी भूखण्ड अथवा देश की संकीर्ण सीमा को राष्ट्र की महनीय संज्ञा नहीं दी गयी है अपितु वेदाभिगत विशाल राष्ट्र का राजा वही हो सकता है, जो विश्व की समस्त प्रजा को प्रिय हो।[5] वैदिक साहित्य में 'राष्ट्र' शब्द राष्ट्र[6], राष्ट्राणि[7], राष्ट्रेण[8], राष्ट्राय[9], राष्ट्रात्[10], राष्ट्रस्य[11], राष्ट्रानाम्[12], राष्ट्रे[13],- इन विभक्तियों में अनेक बार प्रयुक्त हुआ है। राष्ट्रकामाय[14], राष्ट्रपदा[15], राष्ट्रदित्सु[16], राष्ट्रभृत[17], राष्ट्रभृताय[18] आदि समस्त पद भी राष्ट्र के सम्बन्ध में प्रयुक्त हैं। वेदों में राष्ट्र के सम्बन्ध में प्रयुक्त उसके आधारभूत तत्त्व, उपयोगिता, महत्ता, राष्ट्र के प्रति लोगों के दायित्व एवं कर्त्तव्यों का भली-भाँति उपदेश दिया गया है, जो उनके हृदय में अवस्थित राष्ट्रवाद की भावना का द्योतक है। मातृभूमि को तेज और बल से परिपूर्ण उत्तम राष्ट्र के रूप में प्रतिष्ठित कर सर्वश्रेष्ठ बनाये रखने की उनकी कामना थी। वेदों में राष्ट्रवाद एवं एकता का जो स्वरूप प्रतिपादित किया गया है, वह आदर्शस्वरूप एवं शाश्वत महत्त्व का है। भारतीय राष्ट्रवाद में **सर्वे भवन्तु सुखिनः** जैसे उदात्त शंखनाद कर हमारे ऋषियों ने सम्पूर्ण मानवता के कल्याण की कामना की। भारतीय राष्ट्रवाद की नींव सांस्कृतिक मूल्यों पर अवस्थित है, जो मानवता का पर्याय होने से वैश्विक समाज के लिए अनुकरणीय है। राष्ट्रवाद जब सांस्कृतिक चेतना से युक्त हो जाता है तब उसमें जीवन्तता का संचार हो जाता है।

भारतवर्ष भौगोलिक सीमा में निर्मित राज्य मात्र नहीं अपितु सांस्कृतिक रूप से उन्नत वैभवपूर्ण राष्ट्र है जिसका अतीत अत्यन्त समृद्ध और गौरवपूर्ण रहा है। राष्ट्र एक सांस्कृतिक इकाई है, जबकि देश भौगोलिक सीमा का बोधक है। भारत की सांस्कृतिक विरासत इसे एक राष्ट्र के रूप में पहचान देता है। भारत की सनातनी संस्कृति की अविच्छिन्न परम्परा ऐसे मूल्यों से सम्बधित है, जो अनन्तकाल तक हमें गौरवान्वित करते रहेंगे। हमारे मन्त्रद्रष्टा ऋषि, देवर्षि, राजर्षि और महापुरूषों ने ज्ञान-विज्ञान, चिन्तन, दर्शन आदि से पूर्ण भारतीय मनीषा का वह अमूल्य धरोहर हमें सौंपा है, जिसके सांस्कृतिक सूत्र में बंधकर हम भारतवासी अनादि काल से पवित्र सनातन संस्कृति की उदात्त परम्परा का अनुसरण करते आ रहे हैं। भारत की आध्यात्मिक चेतना, समृद्ध विरासत और ज्ञान की अनमोल निधियों से युक्त हमारा वाङ्मय हमारी अमूल्य निधि है। भारतीय वाङ्मय का इतिहास अत्यन्त प्राचीन और गौरवपूर्ण है। विश्व का प्रथम उपलब्ध ग्रन्थ संस्कृत भाषा में रचित वेद, ब्राह्मण, आरण्यक, उपनिषद्, वेदांत-दर्शन, व्याकरण, कोष, ज्योतिष, स्मृतिग्रन्थ, वैद्यक, ललितकला, काव्य, इतिहास, पुराण आदि पालि भाषा में रचित बुद्धोपदेश त्रिपिटक आदि, प्राकृत भाषा में रचित आगम आदि जैन ग्रन्थ, बौद्ध संस्कृत भाषा में रचित वैपुल्य सूत्रादि ग्रन्थरत्न भारतीय वाङ्मय की सांस्कृतिक धरोहर हैं।[19]

हमारी सनातनी संस्कृति त्रिपथगा रही है, जो वैदिक, बौद्ध एवं जैन-तीनों धर्मों की मान्यताओं, आदर्शों, दर्शनों से समृद्ध हुई है। सत्य, करुणा, मैत्री, समता, अहिंसा से पूर्ण मार्ग को प्रशस्त करने वाले महामानव भगवान् बुद्ध ने सम्पूर्ण चराचर में व्याप्त दु:ख से निवृत्ति के लिए जिस मार्ग की देशना दी वह जगत् के सभी प्राणियों के लिए था। उन्होंने **चरथ भिक्खवे चारिकं, बहुजन हिताय बहुजन सुखाय, लोकानुकम्पाय अत्थाय हिताय, सुखाय देवमनुस्सानं''[20],** का उपदेश सारनाथ (ऋषिपतन) में अपने धर्मचक्रप्रवर्तन में सम्पूर्ण मानवता के कल्याण के लिए दिया, किसी देश विशेष को केन्द्र बनाकर नहीं।

विश्व शिक्षा-केन्द्र के रूप में नालन्दा की अपनी विशिष्ट सांस्कृतिक महिमा सदियों तक गुजायमान रही। नालन्दा और उसका समीपस्थ क्षेत्र वैदिक, बौद्ध और जैन-तीनों धर्मों की दृष्टि से गौरवान्वित रहा है। वैदिक धर्म का केन्द्र तो यह था ही, भगवान बुद्ध और महावीर दोनों ने इसी मगध क्षेत्र को अपनी वैचारिक चेतना के प्रसार-भूमि के रूप में चुना। प्राचीन काल में हमारा देश भारतवर्ष अपनी ज्ञान-पराकाष्ठा पर अवस्थित होने के कारण 'विश्वगुरु' की महनीय संज्ञा से विभूषित था। यहीं से ज्ञान की किरण सम्पूर्ण विश्व में प्रसारित हुई। यहाँ नालन्दा, ओदन्तपुरी, विक्रमशिला, बल्लभी, श्रावस्ती, तक्षशिला, काशी आदि अनेक शैक्षिक विश्वविद्यालय ज्ञान-गवेषणा में उत्कृष्टता को प्राप्त किये हुए थे। इन सभी शिक्षा-केन्द्रों में नालन्दा सर्वोच्च शिखर पर अवस्थित था। यह ज्ञान-विज्ञान, कला, साहित्य आदि से परिपूर्ण भारतीय सांस्कृतिक विरासत से समृद्ध भूमि है। इसकी विश्व-विख्यात प्रतिष्ठा ने ही विदेशों से विद्वानों को अध्ययन हेतु यहाँ आने के लिए प्रेरित किया। भारतवर्ष में गुप्तकाल संस्कृति और धर्म का स्वर्णिम काल था, जिसमें नालन्दा से कुमारजीव, गुणवर्मन् पुण्यत्रात, गुणभद्र, परमार्थ, अमोघवज्र आदि नालन्दा

से चीन जाकर बौद्ध संस्कृति को स्थापित किये। चीनी यात्री ह्वेनसांग के यात्रा वृत्तान्त[21] से इस विद्याकेन्द्र की ज्ञान-पराकाष्ठा पर प्रकाश पड़ता है। चीनी यात्री फाह्यान, ह्वेनसांग, इत्सिंग आदि अपने देश से भारतवर्ष अपने ज्ञान-पीपासा के शमन हेतु आये ओर बौद्ध धर्म में निहित धर्म, ज्ञान, दर्शन आदि में समाहित भारतीय सांस्कृतिक विरासत को अपने देश में ले गये। 671 ई0 में भारत आकर इत्सिंग 10 वर्षों तक नालन्दा में अध्ययन कर जब 695 ई0 में चीन लौटा तो प्रायः 400 संस्कृत हस्तलिखित ग्रन्थ की प्रतियाँ उसके पास थीं, जिसमें संस्कृत-चीनी शब्दकोश विशेष उल्लेखनीय है। दोनों देशों के बीच गमनागमन का ऐसा दृढ़ सम्बन्ध स्थापित हुआ कि भारतीय संस्कृति का महत्त्वपूर्ण स्तम्भ बौद्धधर्म चीन में अत्यन्त श्रद्धा के साथ जनमानस में स्थापित हुआ। चीन से कोरिया होते हुए जापान में 552 ई0 में बौद्धधर्म एवं भारतीय संस्कृति का प्रवेश हुआ। इससे पूर्व तीसरी सदी ई0 पूर्व में सम्राट् अशोक ने बौद्धधर्म के रूप में भारतीय सांस्कृतिक राष्ट्रवाद को लक्षद्वीप, स्वर्णभूमि, श्यामदेश आदि देशों में स्थापित किया, जहाँ आज भी थेरवादी बौद्धधर्म अपने मूल स्वरूप में जीवित है, जबकि तिब्बत, चीन, कोरिया, जापान आदि देशों में जो महायान बौद्धधर्म नालन्दा से गया, वहाँ की संस्कृति में रच-बस गया। इन देशों में पूर्व में प्रचलित धर्म एवं संस्कृति और भारतीय संस्कृति के सम्मिश्रण से बौद्ध धर्म का परिवर्तित रूप अस्तित्व में आया।

निष्कर्षः

भगवान् बुद्ध ने जगत्-कल्याण हेतु जो उपदेश दिया उसकी भाषा तत्कालीन मागधी या आधुनिक पालि है। कालक्रम से सद्धर्म का विकास हुआ और महायान बौद्धधर्म अस्तित्व में आया। तत्कालीन नालन्दा विश्वविद्यालय मुख्यरूप से महायान बौद्धधर्म के शिक्षण का केन्द्र था जहाँ पाणिनीय संस्कृत में विरचित दार्शनिक ग्रन्थ एवं बौद्ध संस्कृत या मिश्र संस्कृत-भाषा में विरचित धार्मिक ग्रन्थों का शिक्षण होता था। बौद्ध संस्कृत या मिश्र संस्कृत भाषा संस्कृत एवं मध्यकालीन भारतीय आर्यभाषा- पालि एवं प्राकृत का सम्मिश्रण है। यह एक विशिष्ट प्रकार की भाषा है जो अनेक भाषाओं का सम्मिश्रण होते हुए थी अपना स्वतंत्र अस्तित्व रखती है। बुद्धोपदेशामृत से सम्बधित ये बौद्ध संस्कृत काव्य विश्व वाड्.मय की अमूल्य निधि हैं। इनका प्रभाव तिब्बती, चीनी, फारसी, तुखारी, जापानी आदि देशों के सांस्कृतिक जीवन पर अमिट रूप से पड़ा। इन बौद्ध संस्कृत ग्रन्थों में प्रज्ञापारमितासूत्र, सद्धर्मपुण्डरीकसूत्र, ललितविस्तर, द्धर्मलकवतारसूत्र, सुवर्णप्रभाससूत्र, गण्डव्यूह, समाधिराज, दशभूमीश्वर आदि महायान धर्मानुयायी देशों में अत्यन्त समादृत हैं। नालन्दा से विश्व को प्राप्त थेरवाद और महायान के ग्रन्थों ने भारतीय सांस्कृतिक राष्ट्रवाद की पताका को विश्व में अत्यन्त गर्व के साथ फहराया है।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूचीः

1. पाणिनीय धातु पाठ
2. अष्टाध्यायी, पाणिनी 6.1.134
3. सार्वधातुकेभ्यः ष्ट्रन, लघुसिद्धान्तकौमुदी, उणादिप्रकरण 4.158
4. मनुस्मृति 2/7
5. ऋग्वेद 10.174.15
6. तैत्तिरीयसंहिता 2.2.7.8, मैत्रायिणिसंहिता 1.6.1 अथर्ववेद 19.30.3
7. तैत्तिरीयसंहिता 3.4.8.9
8. ऋग्वेद 10.174.1
9. तैत्तिरीयसंहिता 3.4.6.2
10. ऋग्वेद 10.124.5, अथर्ववेद 3.4.4.2
11. ऋग्वेद 7.3.4.1
12. अथर्ववेद 5.17.19
13. तैत्तिरीयसंहिता 3.4.8.9
14. शुक्लयजुर्वेद 10.24.39.419, तैत्तिरीयसंहिता 1.18. 11.1
15. अथर्ववेद 10.3.16
16. तैत्तिरीयसंहिता 3.4.8.1
17. अथर्ववेद 6.118.2
18. तत्रैव 19.37.3
19. संस्कृत और संस्कृति, डॉ. राजेन्द्र प्रसाद, प्रभाव प्रकाशन दिल्ली, वर्ष 2018, पृष्ठ
20. महावग्ग : विनयपिटक
21. ह्वेनसांग यात्रा वृत्तान्त।

❖❖❖